ओ३म्

<u>वैदिक विद्वान पं. वेदप्रकाश श्रोत्रिय का प्रवचन</u>

'काम, क्रोध, लोभ व मोह को कैसे वश में करें?'

प्रस्तुतकर्त्ता–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।

आर्य जगत के सुप्रसि़द्ध वैदिक विद्वान पण्डित वेदप्रकाश श्रोत्रिय ने श्रीमद्दयानन्द आर्ष ज्योतिर्मठ गुरूकुल पौंधा, देहरादून के वार्षिकोत्सव में अपने प्रवचन का आरम्भ वेदमन्त्र **ओ३म् शं नो मित्रः शं वरूण शं नो भवत्वऽर्यमा ....** के पाठ से किया। उन्होंने कहा कि मनुष्य संसार में जन्म लेता है तो वह यहां अपना कर्माशय लेकर आता है।

इस जन्म में वह पाप–पुण्य कर्म करता है। कर्माशय तीन प्रकार का होता। पाप–पुण्य कर्माशय, पुण्य कर्माशय और पाप कर्माशय। इन पाप व पुण्य कर्माशय के बीच में एक उभय पाप–पुण्य कर्माशय है। जहां मिथ्याचार होता है वहां पर राग व द्वेष होते हैं। जहां पर राग व द्वेष होते हैं वहां पर काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि होते हैं और उन्हीं से प्रेरित होकर व्यक्ति कर्म करेगा तथा उन संस्कारों से अपने अन्तःकरण को आबद्ध करेगा। बार–2 उनसे प्रेरित होकर कर्म करता चला जाता है। **अब प्रश्न है कि काम, क्रोध, लोभ व मोह के संस्कारों को कैसे रोका जाये?** क्या किताब पढ़ लेने से अथवा किसी से कुछ सुन कर कुछ जान लेने मात्र से इन्हें रोक सकेगा। तो सुन लो बन्धुओं ! न केवल सुनने से, न केवल पढ़ने से या किसी विद्वान से बातचीत कर लेने से आपको कोई उपलब्धि प्राप्त नहीं हो पायेगी क्योंकि **प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि काम बहुत बुरी चीज है, लोभ बहुत बुरी चीज है, क्रोध बहुत बुरी चीज है, इनसे अपमान होता है।** तब वह अपमानित व्यक्ति प्रतिज्ञा करता है कि क्रोध नहीं करूगां। पत्नी व पति का एक उदाहरण देकर आपने बताया कि एक पति–पत्नी में झगड़ा हुआ। पति हमारे पास आया, हमने उसे क्रोध न करने की सलाह दी। उसने प्रतिज्ञा की कि अब वह कभी क्रोध नहीं करेगा। अगले ही दिन उसका फिर अपनी पत्नी से झगड़ा हो गया। फिर उसने हमसे नई तरकीब पूछीं। बन्धुओं ऐसी तरकीब भाषण सुनने व किताब पढने से नहीं मिलेगी। **विद्वान वक्ता ने कहा कि मैंने ऋषियों से पूछा कि तुमने तो मोक्ष प्राप्त कर लिया था फिर तुमने यह प्रपंच क्यों किया तो उन्होंने बताया कि हमने अपने बन्धुओं के कल्याण के लिए यह कार्य किया। इस लिये किया कि जो उपलब्धि हमें मिली है वह दूसरे व सभी मनुष्यों को भी मिले।**

मनमोहन कुमार आर्य

श्री श्रोत्रिय ने कहा कि परमात्मा ने 24 प्रकार की सामर्थ्य जीवात्मा व मनुष्यों को दी है। उन्होंने कहा कि यदि ईश्वर जीवात्मा को प्राण न देता तो वह इन 24 शक्तियों का प्रयोग नहीं कर सकता था। आंख यदि देखती है तो प्राण से, कान यदि सुनता है तो प्राण से, नाक सूंघती है तो प्राण से और हम जो कर्म करते हैं वह भी प्राण से ही करते हैं। मैं चलता हूं प्राण से, मैं खाता हूं यह भी प्राण से, जल पीता हूं प्राण से और भोजन को पचाता हूं तो वह भी प्राण से। शरीर का मल मूत्र बाहर आता है तो वह भी प्राण से ही निकलता है। यह सब कियायें हमारे प्राणों के द्वारा ही सम्पन्न होती है। अथर्ववेद कहता है कि यह पूरा का पूरा विश्व प्राण के आधार पर स्थित हो रहा है। उपनिषदों ने यह कह डाला कि जब सारा विश्व प्राण के बस में है तो इस प्राण को ही बस में क्यों न कर लो। जिसका प्राण बस में हो जायेगा तो उसका कल्याण हो जायेगा। ऋषि दयानन्द कहते हैं कि **जब बालक के स्थान और प्रयत्न खुलने लगें तब उसकी माता को चाहिये कि वह बालक को शुद्ध–शुद्ध वर्णों का उच्चारण करना सिखावे। मैंने ऋषि से कहा कि सीखा दिया अब क्या करें? तो ऋषि ने कहा कि अब गायत्री मन्त्र सिखावें। ऋषि से फिर कहा कि सीखा दिया, अब क्या करें तो उन्होंने कहा कि जब गायत्री मंत्र सीख जावे तो उसका अर्थ भी उसे सिखावें। ऋषि को कहा कि अर्थ सीखा दिया अब क्या करें? तो ऋषि ने कहा कि अब उसे गायत्री के जप की रीति सीखावें। जप से क्या होगा? तो ऋषि लिखते हैं कि इससे बालक की बुद्धि अत्यन्त सूक्ष्म होकर कठिन से कठिन विषय के आरपार जानने में अल्प समय में समर्थ हो जायेगी।** ऐसा इसलिए होता है कि हमस ब के अन्तःकरण पर जो काम, क्रोध, लोभ व मोह के

शत्रु बैठे हुए हैं, गायत्री के जप से आत्मा में वह बल आ जाता है कि जिससे इन काम, क्रोधादि शत्रुओं का निवारण होता है।

विद्वान वक्ता ने उदाहरण दिया कि मेरे एक मित्र घर पर आते हैं, मैं उनसे मिलना नहीं चाहता। बालक को कहता हूं कि जाकर उन्हें कहो कि पिताजी घर में नहीं है। वह बालक जाकर कहता कि **जी पिताजी ने कहा है कि उन्हें जाकर कहो कि पिताजी घर पर नहीं है।** मुझे बालक के इस प्रकार से सत्य बोलने पर प्रसन्न होना चाहिये था परन्तु जब वह मेरे पास आता है तो मैं क्रोधित होकर उसे डांटता हूं और क्रोध में उसे थप्पड़ मार देता हूं। वह रोने लगता है और कहता है कि **आपने ही तो कहा था उन्हें कह दो कि पिता जी घर पर नहीं है। श्री श्रोत्रिय ने महर्षि दयानन्द का नाम लेकर उन्हें स्मरण किया और कहा कि काम, क्रोध, लोभ व मोह के बिना काम नहीं चलेगा। उन्होंने कहा कि जब यह अविद्या प्रधान होते हैं तो खतरनाक होते हैं और जब ये विद्या प्रधान होते है तो हमारे लिए लाभप्रद होते हैं। विद्या प्रधान क्रोध क्या है, वह यह है कि सत्य पर क्रोध मत कर, असत्य पर क्रोध कर। यह है विद्या प्रधान क्रोध। इसी प्रकार से दूसरे काम, लोभ व मोह आदि की स्थिति भी है।** श्री वेदप्रकाश श्रोत्रिय जी ने कहा कि ब्रह्मचारी व बालक को पद्मासन आदि में बैठाने का अभ्यास कराना चाहिये। ईश्वर ने वैज्ञानिक रीति से मेरे शरीर की ऐसी रचना की है कि आसन में बैठकर हाथों को घुटनो पर रखते ही कमर सीधी हो जाती है। इससे शरीर धनुष की आकृति का बन जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि जो मनुष्य इस आसन में बैठ कर गायत्री मन्त्र की उपासना प्राणायाम पूर्वक करता है तो वह अपने प्राणों को वश में करके जब जीवात्मा शिर से ऊपर की दिशा को जाता है तो ब्रह्म में ही पहुंच जाता है, उसे प्राप्त कर लेता है।

श्री श्रोत्रिय ने कहा कि प्राणायाम भीतर व बाहर आने जाने वाले प्राणों की गति का विच्छेद कर देना ही है। इसके अतिरिक्त किसी ग्रन्थ या शास्त्र में उन्हें प्राणायाम की कोई परिभाषा नहीं मिली है। ऋषि दयानन्द सरस्वती कहते हैं बाहर आने वाले और भीतर जाने वाले प्राणों को रोक दो, इसका अभ्यास करने से प्राणायाम सिद्ध हो जाता है। ऋषि, मुनियों व योगियों के आचरण को जो मनुष्य करता है वह सिद्ध कहलाता है, उन्हीं को देखकर उनका आचरण व अनुकरण करके प्राणायाम करना चाहिये। उन्होंने आगे कहा कि हम जो भोजन करते हैं वह पेट में पहुंच जाता है। वहां भोजन की पाचन क्रिया से हमारी प्राणवायु दूषित हो जाती है। ऋषि ने लिखा है कि जिस प्रकार से वमन होता है इसी प्रकार शरीर में विद्यमान वायु को बलपूर्वक बाहर निकालना चाहिये। यह क्रिया करते हुए मन में ओ३म् का जप करते रहना चाहिये। यह क्रिया करते हुए जब मनुष्य बाहर की वायु को भीतर लेता है तो शुद्ध वायु शरीर में जाती है। इस वायु को बाहर छोड़ने व बाहर ही रोक देने, फिर वायु को भीतर लेने और भीतर ही कुछ देर रोकने की क्रिया करने व इसका अभ्यास करने से शरीर के कोष्ठों की वायु शुद्ध हो जाती है। **इस क्रिया से लाभ यह होता है जैसे–जैसे अभ्यास करता जाता है तो उस साधक के प्राण अपने वश में हो जाते हैं वा स्थिर हो जाते हैं और त्यों त्यों उसका मन भी स्थिर होता जाता है। मन के स्थिर होने से इन्द्रियां स्थिर होती जाती हैं। इससे हमारे द्वारा शुभ कर्म होना आरम्भ हो जाते हैं।** उन्होंने कहा कि जिस प्रकार बीज को तपाने से उसकी उगने व अंकुरित होने की क्षमता नष्ट हो जाती है, वैसे ही प्राणों को रोकने से इन्द्रियों व मन के सभी दोष का प्रभाव नष्ट हो जाता है और वह फिर अंकुरित नहीं होते। यह संस्कार आपका बनता है प्राणायाम से। ऐसा करने से मन के सभी दोष दूर हो जाते हैं। **संस्कार का क्या अर्थ है? दोषों का परिमार्जन करना ही संस्कार का अर्थ है। प्राणायाम के अभ्यास से दोषों का परिमार्जन होता है और बुरे संस्कार उठते नहीं और अच्छे संस्कार उत्पन्न होते हैं। जब मनुष्य गायत्री का जप प्राणायामपूर्वक करता है उस पर गायत्री कल्याण की जो वर्षा करती है उसका कारण प्राणायाम ही है।** प्राणायाम करने से मेरे शरीर का तेज पुंज व हिरण्य ऊपर की ओर जाता है। इससे शक्ति प्राप्त होती है। उस शक्ति के प्राप्त होने से वह व्यक्ति ऊर्ध्वरेता बनता है। बालक जब 25 वर्ष का युवक होता है तो गायत्री उसके शरीर में एक परिमण्डल बनाती है, उसे गायत्री धाम के नाम से कहा जाता है। **भोग व वासनाओं के रथ पर जब यह बालक चढ़ता है तो यह गायत्री रथ पर चढ़े हुए उस व्यक्ति को नीचे उतार लेती है और उसकी भोगों व वासनाओं से रक्षा करती है। जीवन का पतन होने से रक्षा होती है।** जीवन को पतन से बचाने का अन्य कोई उपाय संसार में नहीं है। इसी मार्ग को अपनाकर रक्षा हो सकती है। माता–पिता को चाहिये कि वह स्वयं भी महर्षि दयानन्द की पद्धति से गायत्री की उपासना करें और अपनी सन्तानों को भी करायें। इस व्याख्यान को गुरूकुल में उपस्थित सहस्रों श्रद्धालुओं ने बहुत पसन्द किया।

–मनमोहन कुमार आर्य
पताः 196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोनः09412985121